International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

आदिवासी वैचारिकी और साहित्य में अभिव्यक्त चेतना के विविध आयाम

Mr. Shantaram Shelya Valvi

Assistant Professor, Karmveer Abasheb Alias N.M.Sonawane College, Satan

शोध सारांश

आदिवासी साहित्य का मूल स्वर जल-जंगल-जमीन है स यूरोप से पूरे विश्व में फैले औद्योगिक क्रांति के पश्चात विकास की नई परिकल्पनाओं ने जन्म लिया स यहीं से प्राकृतिक संसाधनों के अत्याधिक दोहन का सिलसिला शुरू हुआ स भौतिक सुविधा के संसाधनों ने मानवीय जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया स वहीं दूसरी ओर वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण मनुष्य जीवन अधिकाधिक सुखकर होता गया स किंतु जो समुदाय पूरी तरह से जंगलों-पहाड़ो पर निर्भर था, उसका भारी नुकसान हुआ स प्राकृतिक संसाधनों के अत्याधिक दोहन से यह इस समुदाय के जीवन-यापन के सभी साधन लूट लिए गएँ स परिणामत हजारों-लाखों वर्षों से प्रकृति के साथ विलक्षण सामंजस्य बिठाकर अपनी संस्कृति और जीवन दर्शन निर्माण करनेवाला एक बहुत बड़ा समुदाय अपने अस्तित्व से झूँझ रहा है स भूमंडलीकरण ने आदिवासी समुदाय का अत्याधिक नुकसान किया है स आदिवासी सामाजिक कार्यकर्ता, चिंतकए रचनाकार इन तमाम सवालों को व्यवस्था के सामने बड़ी विनम्रता से पूछ रहे हैं स

भारत में लगभग सभी क्षेत्रों में आदिवासी समुदाय रहता है स इनका भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधाओं के साथ ही संघर्ष का गौरवशाली इतिहास भी है स किंतु विकास के नाम पर लाखों वर्षों से जीवन यापन करने वाले आदिवासियों के हिस्से विस्थापन का बहुत बड़ा संकट आ खड़ा हुआ है स अपनी जमीन से उखाड़े जाने के पश्चात वे कहीं के नहीं रहते स डॉ.खान्नाप्रसाद अमीन 'आदिवासी की मौत' कविता में यही भाव व्यक्त करते हुए लिखते हैंए "आदिवासी की मौत / उस दिन होती है / जब नष्ट होता है / जलए जंगलए जमीन / और उनकी सभ्यता एवं संस्कृति / जहाँ सवार होता है कोई / हरामखोरए पूँजीवादीए जमींदार / सदैव उनका शोषण करने वाला स"[1] आज आदिवासी समुदाय अपने अस्तित्व के लिए झगड़ रहा है स आदिवासी साहित्य प्रकृति के साथ अद्भत जुड़ाव से विकसित हुआ है स आदिवासी रचनाकारों की प्रेरणा ही प्रकृति और संस्कृति रही है स अपने पुरखों द्वारा विकसित जीवन दर्शन केंद्र में रहा है स आदिवासी साहित्य के मानदंडों पर 'राँची घोषणापत्र'[2] अधिक विस्तार से विवेचन करता है स हम कह सकते हैं कि आदिवासी साहित्य की वैचारिकी और उसमें निहित चेतनात्मक भावों

को निष्पक्ष होकर देखने की आवश्यकता है स प्रतिक्रियावादी साहित्य मानने की अपेक्षा उनके अधिष्ठान को देखने की जरुरत है स तभी हम सही अर्थ में आदिवासी साहित्य के साथ न्याय कर पाएँगे स मूलतः आदिवासी साहित्य चेतना जागृत करनेवाला साहित्य है, शोषण, अन्याय के खिलाफ़ संघर्ष की प्रेरणा देनेवाला साहित्य है स अपनी अस्मिता को बनाएँ रखने की कोशिश करता ही स अर्थात "चेतना आदिवासी साहित्य का साधन है और अस्मिता की माँग और उपलब्धि उसका साध्य स"[3]

प्रस्तावना

'आदिवासी' शब्द का मूल अर्थ है- मूल निवासीए पहले का, पुरानाए आदिमए किसी प्रदेश या राज्य का मूल निवासी स भारत विविधाओं का विशाल भंडार है स अत: भारतीय परिप्रेक्ष्य में इसका निश्चित अर्थ निकलना बहुत कठिन कार्य है स जातिए वंशए संप्रदाय, भाषाए संस्कृति आदि सभी दृष्टि से यहाँ हजारों भिन्नताएँ हैं स अत: उपर्युक्त अर्थ को लेकर विद्वानों में अलग-अलग मत हैं स इसके लिए भारतीय संविधान में 'अनुसूचित जनजाति'[5] की संज्ञा का प्रयोग हुआ है स विद्वानों के एक गुट ने इन्हें ही आदिवासी माना है स आदिवासी चिंतक अपनी 'वैचारिकी'[6] एक अलग विशिष्ठता के साथ हमारे सामने रखते हैं स आदिवासी समुदाय स्वयं को प्रकृति पूजक, प्रकृति रक्षक मानता है स उनका मानना है, कि लाखों वर्षों से प्रकृति के साथ रहकर जीवन मूल्य और सांस्कृतिक मूल्य विकसित किएँ है स इसलिए आदिवासी चिंतक अपनी वैचारिकी का अधिष्ठान 'पुरखा संस्कृति' को मानते हैं स

भारतीय परिप्रेक्ष्य में आदिवासी समुदाय निरंतर संघर्षशील रहा है स आदिवासी समुदाय प्राचीन काल से ही विविध समुदायों के आक्रमण से आक्रांत होकर जंगलों-पहाड़ों में जीवन यापन को मजबूर हुआ स आज भी आदिवासी समुदाय अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए संघर्षशील है स वैश्विक साम्राज्यवाद और औद्योगिक क्रांति के उपरांत आदिवासी समुदाय अधिक सकते में आ गया है स उनके पारंपरिक जीवन यापन के संसाधनों पर सरकारोंए उद्योगपतियोंए मल्टीनॅशनल कंपनियों के विविध परियोजनाओं ने अपने कब्जे में कर लिएँ हैं स "आदिवासी भूमंडलीकरण, निजीकरणए उदारीकरणए और बाजारवाद के आगे खस्ता हालए परस्त से लेकर मरणासन्न है स 'तद्भव' के नवंबर 2016 में डॉ.वीर भारत तलवार ने इस सिलसिले में एक महत्वपूर्ण बात कही हैं, कि आज आदिवासियों का अस्तित्व संकट में हैं स मनमोहन सिंह नेतृत्ववाली पिछली काँग्रेस सरकार ने वैश्वीकरण और भूमंडलीकरण की नीतियों को स्वीकृति और लागू करके पूँजीवादी शोषण के लिए आदिवासियों के पहाड़-जंगल को खोल दिया है और उन्हीं के नक्शे-कदम पर दुगने उत्साह से चौगुनी ताकत लगाकर मौजूदा सरकार दौड़ रही है स"[7]

यद्यपि भारतीय स्वाधीनतापूर्व आदिवासियों ने जल-जंगल-जमीन को बचाने के लिए, शोषण के खिलाफ़ अनेक लड़ाईयाँ लढ़ी हैं स भारतीय आदिवासियों का भील विद्रोह (1881), बस्तर क्रांति- 'भूमकाल' (1910), भील आंदोलन- 'धूमाल' (1913), भील-गरासिया 'एकी' आंदोलन (1922), नागा संघर्ष- जेलियांगरांग आंदोलन

(1932), वारली संघर्ष (1945.1948), संथाल 'हूल' आंदोलन (1854.1856), झारखंड के आदिवासी आंदोलन-तिलका मांझी विद्रोह (1784), बिरसा मुंडा 'उलगुलान' (1895.1900), झारखंड आंदोलन (1920.2000) आदि पराक्रमी, शौर्यशालीए जाज्वल्यमयी, प्रेरणादायी, मानवीयता बचानेवाली हजारों लड़ाईयों का जीता जगता इतिहास है स आदिवासी समुदाय ऐसी अनगिनत लड़ाइयों के अनुभवों के साथ जीवन यापन करता रहा है स उनके स्वभाव में ही यह 'चेतना' बनकर लाखों वर्षों से परिचालित हो रही है स उक्त हजारोंलड़ाइयाँ इसलिए हुई, "क्योंकि ये आजाद प्रकृति के लोग हैं स आजाद प्रकृति के लोग होना अपने-आप में बहुत महत्वपूर्ण बात है स आजाद प्रकृति के लोगों का मतलब है, जिनको पराधीनता स्वीकार्य नहीं हैए जो स्वाभिमानी हैंए जो किसी के अधीन नहीं रहना चाहते स"[9] आदिवासी साहित्य में उक्त चीजों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति को समझने-जानने का प्रयास इस शोध आलेख द्वारा किया गया है स

कुंजी शब्द

चेतनाए विमर्शए मौखिक-लिखित साहित्यए आदिवासी बोली-भाषाएँ, प्रथाएँ, संस्कृतिए अस्मिता, जल-जंगल-जमीन, बड़े बाँध, रास्तेए खनन, सरकारी एवं निजी कंपनियों की विकास परियोजनाएँ, विस्थापन, गरीबीए संविधान, आरक्षण, शिक्षा, राजनीति, समाज का नेतृत्व स

उद्देश्य

1. आदिवासी समुदाय का सामाजिक-सांस्कृतिक परिचय प्राप्त करना स
2. आदिवासी समुदाय की राजनीतिक उपस्थिति को समझना स
3. आदिवासी रचनाकारों द्वारा लिखित साहित्य में निहित कथ्य को समझना स
4. वर्तमान विकास परिकल्पनाएँ और पर्यावरण के संबंधों को विवेचित करना स

जल-जंगल-जमीन बचाने की चेतना-

आदिवासी समुदाय जंगल को घर मानता है स हजारों-लाखों वर्षों से आदिवासी समुदाय जंगल में निवास करता रहा है स इसलिए उनकी जीवनशैली, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक ताना-बाना जंगल के साथ विकसित हुआ है स आप विश्व के किसी भी कोने में जाइएगा, वहाँ के आदिवासी समुदाय के लोग जल-जंगल-जमीन को माँ का स्थान देते हैं स यही कारण है कि आदिवासी समुदाय में मातृसत्तात्मक कुटुंब व्यवस्था विकसित हुई स सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना भी पूरी तरह से प्रकृति के साथ तालमेल से विकसित हुई है स नाना प्रकार के पेड़-पौधों और वृक्षों से दीवारें और आसमान को छत मानकर अड़ोस-पड़ोस के सभी जंगली जीव-जंतु परिवार के सदस्य होते हैं स जहाँ अपने पुरखा-पूर्वजों की आत्माओं के साथ प्रकृति के अनुशासन में निर्भाव होकर रहते हैं स अर्थात जैवविविधता का संरक्षण, सह-अस्तित्व और सहजीवी संबंध यही आदिवासी समुदाय के जीवन दर्शन के व्यवहारिक सिद्धांत है स

"जंगल आदिवासी समुदाय के पुरखों का घर हैए जंगल सही उनका अस्तित्व हैए जंगल उनकी आजादी और आनंद का निसर्ग अखाड़ा है स"[10] यद्यपि भारतीय आदिवासी साहित्य भूमंडलीकरण के पश्चात समृद्ध हुआ है, परंतु इससे पहले भी अंग्रेजों ने बारीकी से अध्ययन करके अनुसंधानत्मक दृष्टि से बहुत कुछ लिखा है स स्वतंत्रता के पश्चात महाश्वेता देवी ने 'जंगल के दावेदारष और 'अग्निगर्भष लिखाकर मुख्यधारा के साहित्य जगत में आदिवासी साहित्य की विशेष प्रतिष्ठा की स इसके लिए लेखिका को 'साहित्य अकादमी' और 'ज्ञानपीठ' जैसे अखिल भारतीय साहित्यिक पटल के सर्वश्रेष्ठ पुरस्कारों से नवाज़ा गया है स बांग्ला भाषा में लिखे इन उपन्यासों ने आदिवासी साहित्य के स्वर को बुलंद कर दिया स आदिवासी समस्याओं को नए सिरे से देखने-समझने की दृष्टि दी स राजेंद्र अवस्थी का'जंगल के फूल' (1960), राकेशकुमार सिंह का 'जो इतिहास में नहीं है' (2005), हरिराम मीणा का 'धूणी तपे तीरष (2008) आदि उपन्यासों में आदिवासियों के लिए जंगल के महत्व को विलक्षण साहित्यिक ताकत के साथ लिखा गया है स आदिवासियों द्वारा जो भी आंदोलन, विद्रोह हुएँ हैं, उनमें जंगल और जमीन केंद्रीय तत्व रहे हैं स महाराष्ट्र के वाहरु सोनवणे, चामुलाला राठवाए भुजंग मेश्राम हो, गुजरात के डॉ.खान्नाप्रसाद अमीन होए झारखंड की निर्मला पुतुल और वंदना टेटे होए या बिहार के अकादमिक जगत में विशेष स्थान रखनेवाले युवा कवि अनुज लुगुन हो इन सबके साहित्य में जंगल को ही सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है स डॉ.खान्नाप्रसाद अमीन 'बचा सके तो बचा लोष कविता में लिखते हैंए "बचा सके तो बचा लो / जंगल और जंगल की जड़ी-बूटियाँ / कंदमूलए शिलाजीतए सुनहरा मशरूम / जंगली फल और फूल / पक्षियों के मधुर स्वर / झरनों के कल-कल नाद / आँवला, खिरनीए बहेड़ाए गुग्गरए नीम, पलासए सहिजनए धन्वतरी, बाँस और बेंत के पेड़ स"[11] युवा सामाजिक कार्यकर्ता और अंतर्राष्ट्रीय आदिवासी वक्ता ग्लैंडसन डुंगडुंग ने अंग्रेजी में ष।कपअेपे ंदक जीमपत थ्वतमेजष्ए म्दकसमे ब्तल पद जीम त्मक ब्वततपकवतष्ए ष्डपेपवद ैतंदकरू ।ॅत वित छंजनतंस त्मेवनतबमे पद प्दकपंष्ए षैवेम बवनदजतल पे पज ।दलूंलघ दृ न्दजवसक ैजवतपमे तिवउ प्दकपंदेष प्दकपहमदवने च्मवचसमेष्ए ष्ब्तवेपितमष और हिंदी में 'असुरों की पीड़ा', 'आदिवासी और वनाधिकारष, 'विकास के कब्रगाह', 'झारखंड में अस्मिता संघर्षष, 'उलगुलान का सौदा' आदि ग्रंथ लिखकर भारतीय आदिवासी संबंधी मूल प्रश्नों को अकाट्य तर्कों के साथ हमारे सामने प्रस्तुत किएँ हैं स

मौजूदा विकास की परिकल्पना ने आदिवासियों का घर ही छीन लिया है स उनके हिस्से विस्थापन की विद्रूपता आई हैं स निर्मला पुतुल ने इसलिए प्रकृति को बचाए रखने के लिए 'आओ मिलकर बचाएँ' कविता में लिखती हैए "अपनी बस्तियों को / नंगी होने से / शहर की आबो-हवा से बचाएँ उसे / बचाएँ डूबने से / पूरी की पूरी बस्ती को स"[12] हम कह सकते हैं कि समस्त आदिवासी साहित्यकार जंगल और जमीन को प्रेरणा मानते हैं स अपनी माँ का दर्जा देते हैं स जंगल की तमाम जीव-जंतुओं को अपने परिवार का सदस्य मानते हैं स अत: आदिवासी साहित्य को जानने-समझने के लिए परंपरागत दृष्टि की अपेक्षा नए भावबोध के साथ आगे बढ़ने की आवश्यकता है स प्राकृतिक संसाधनों का अत्याधिक दोहन

करने की अपेक्षा मर्यादित संसाधनों से साथ जीवन यापन करने की शैली आत्मसात करनी चाहिए स तत्काल प्रभाव से अखिल वैश्विक स्तर पर अनिवार्य रूप से अनियंत्रित जनसंख्या नियंत्रण करना चाहिए स भारत, चीनए पाकिस्तानए इंडोनेशिया, रशिया, ब्राझिल, कनडा जैसे देशों में कड़े-से-कड़े कानून बनाने की आवश्यकता है स जमीनी स्तर पर लागू करके पृथ्वी के माहौल को संतुलित बनाए रखने की जरुरत है स

सांस्कृतिक और भाषिक चेतना-

आदिवासी साहित्य का मूल स्वर संस्कृति औए भाषा को बचाना है स आदिवासी अपने आप को जाति नहीं मानते, उनकी यह संकल्पना नहीं है स समुदाय को ही राष्ट्र मानते हैं स इसलिए सह-अस्तित्वए सामूहिकताए सहजीवी मूल्य उनकी संस्कृति के भाव रहे हैं स "आदिवासी समुदाय में एक व्यवस्था होती है स विशिष्ठ भू-भाग में रहनेवाले समुदाय का एक मुखिया होता है, माँझी होता हैए हड़ाम होता है स उस समुदाय का एक स्थान होता हैए अखाड़ा होता है, जाहेरथान होता है, घोटुल होते हैं स"[13] इससे समुदाय की भावनात्मक एकता और सुरक्षा संभव होती है स आदिवासी समुदायों पर गैर आदिवासी लेखकों-अनुसंधान करनेवाले मनीषी उक्त संस्कार के काल्पनिक चित्र खींचते है, उनमें अनुभवात्मक अनुभूति नहीं होतीए बल्कि सहानुभूतिपूर्वक बोध होता है स साथ ही भाषा समझ की मर्यादा भी उन्हें आदिवासी समुदाय को समझने के लिए कोसो दूर फेंक देती हैं स आदिवासी समुदाय की भाषाओं और बोलियों को सम्मान देना होगा स भारतीय संविधान में दो आदिवासी भाषाओं को स्थान मिला है, किंतु भारतीय आदिवासी समुदाय भाषिक दृष्टि से संपन्न है स आवश्यकता है उनके प्रति मानवीय दृष्टिकोण से देखना स उनकी भाषा-बोली को उचित सम्मान देना स उचित अवसर देना स भाषिक हीनता दूर कर उसमें निहित सांस्कृतिक मूल्यों और ज्ञान को सुरक्षित करना जरुरी है स आदिवासी समुदाय की राष्ट्र की संकल्पना भी आम नहीं है स चूँकि आदिवासी समुदाय सामूहिकता के मूल्यों पर चलनेवाला समुदाय है स अत: वह स्वयंपूर्ण है स अपनी जरूरतें सामूहिक रूप में पूर्ण करता है स इलसिए राष्ट्र की संकल्पना 'आमरा गाँव माँ आमरो राज' (महाराष्ट्र), 'मावा नाटे मावा राज' (झारखंड) पर आधारित है स इसका अर्थ होता है, 'हमारे गाँव में हमारा राज' स विशिष्ठ भू-भाग के अनेक गांवों को मिलकर परगना (प्रांत) बनता है और अनेक परगाने मिलकर 'राजष अर्थात 'राष्ट्र' बनता है स भौगोलिक दृष्टि से राष्ट्र की सीमाएँ कुछ बड़ी तथा कुछ लघु होती हैं स इस प्रकार पूरा आदिवासी समुदाय एक-दूसरे के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा रहता है स भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात जब भाषावार राज्यों का निर्माण हुआ, तब सभी आदिवासी भाषाओं को दुर्लक्षित किया गया स साथ ही संविधान में 'आदिवासीष शब्द की बजाय 'अनुसूचित जनजातिष शब्द का प्रयोग किया गया स परिणामत: उनकी भाषा और अस्मिता सत्तासीन लोगों की दृष्टि से महत्वहीन हो गई स निर्मला पुतुल 'बिटिया मुर्मू के लिए' कविता में आदिवासी

संस्कृति कीहीनता और दूषितिकरणप्रक्रिया का प्रखर विरोध करती है, “वे दबे पाँव आते है तुम्हारी संस्कृति में / वे तुम्हारे नृत्य की बढाई करते हैं / वे तुम्हारी आँखों की प्रशंसा में कसीदे पढ़ते हैं / वे कौन हैं ? सौदागर हैं वे ... समझो... / पहचानो, उन्हें बिटिया मुर्मू / पहचानो ।”[14] आज पढ़-लिखकर अपनी हालातों के कारणों को खोजता आदिवासी अपनी लेखनी के माध्यम से हम सभी की आँखें खोल रहा है स वह साहित्य के जरिए अपनी पहचान और इतिहास के यथार्थ व्यक्त कर रहा है स अत: आवश्यकता है कि हमेंहमारी दृष्टि अधिक संवेदनशील बनाने की स आदिवासी साहित्य में अभिव्यक्त भावों कोए निहितार्थों को समझने का प्रयास करें स मानवीयता का सर्वोच्च उदाहरण प्रस्तुत करते हुए उनके मूलभूत अधिकारों को पुन: बहाल करें स ‘आदिवासियत’[15] को अक्षुण्ण रखते हुएउनकी उन्नति और प्रगति का कारण बनें स

सामाजिक-साहित्यिक चेतना-

इस संदर्भ में आदिवासी समाज के चिंतक डॉ. दयाशंकर त्रिपाठी लिखते हैंए “समाज के भीतर आदिवासी सवालों को लेकर जागरुक होना आदिवासी समाज चेतना है स जब यही चेतना सांगठनिक शक्ल धारण करती है, तब आंदोलन का रूप ले लेती है स ..... साहित्य के भीतर आदिवासी समुदाय की समस्याओं के प्रति जागृति और जागरूकता आदिवासी साहित्य की चेतना है स”[16] अशिक्षा आदिवासी समुदाय की सबसे बड़ी समस्या है स यद्यपि प्राचीन काल से आदिवासी समुदाय प्रकृति के गोद में रहकर प्रत्यक्ष ज्ञान अर्जित किया था स जिसके बलबूते पर उन्होंने लाखों वर्षों तक सर्वायवल किया स संस्कृति और कला में सौंदर्य तत्व भरे सआजाद जीवन शैली के मूल्य विकसित किएँ स परंतु समय की गति के साथ उन पर आक्रमण होते गएँ स पीढ़ी-दर-पीढ़ी अर्जित ज्ञान से वंचित हो गए स परिणामत: अपना ‘स्वत्वष ही खो गया स आधुनिक काल में शिक्षा के लिए विशेषत: स्वतंत्रता के पश्चात भाषा सबसे बड़ी समस्या रही स साथ ही उनके पुरखों के ज्ञान की अपेक्षा अन्य समाज के ज्ञान को आत्मसात करना बड़ा चुनौतीपूर्ण कार्य रहा है स यहाँ यह बात विशेष ध्यान देनी चाहिए कि स्व-भाषा और स्व-ज्ञान को छोड़कर इतर भाषा में अन्य समाज के ज्ञान को आत्मसात करने से स्व-भाषा और स्व-ज्ञान के प्रति हीनता बोध निर्माण हुआ स यदि विवेकपूर्ण दृष्टि से देखा जाए तो आज भी आदिवासी समुदाय के बच्चों के लिए अकादमिक जगत में यही सबसे बड़ी समस्या है स आज अनेक शिक्षा संस्थानों विविध अनुशासन में पढ़ रहे आदिवासी समुदाय के बच्चों को देखेंगे तो आप सहज ही महसूस करेंगे कि उनकी प्रस्तुति में कमी हैं आत्मविश्वास की, न कि संबंधित विषय सामग्री, विषय वस्तु और आशय ! भाषा के साथ संस्कृति का परिचालन होता है स यदि हम इसी भाषानीति का अनुसरण करते रहेंगे तो निश्चित ही आदिवासी समुदाय के व्यक्ति की भाषा और संस्कृति गहराई से प्रभावित होगी स सांस्कृतिक मूल्य नष्ट हो जाएँगे स वह अपनी अस्मिता खो देगा सइस बीच आधुनिक शिक्षा प्राप्त कर आदिवासी साहित्यिक अपनी प्रतिभा से साहित्यिक दुनियाँ में आभामंडल प्रज्वलित किया है स जिस

प्रकार प्रकृति में विविधता हैं, बिलकुल उसी प्रकार अलग-अलग भू-प्रदेशों में रहकर आदिवासी समुदाय ने लाखों वर्षों से प्राकृतिक के साथ अद्भुत ताल-मेल बिठाकर अपनी संस्कृति विकसित की थी स उसका अंकन साहित्य की विविध विधाओं में कलात्मक रूप से आदिवासी साहित्यिक कर रहे हैं स समुदाय की जीवन यात्रा के साथ-साथ कालांतर में हुए बदलावों को बड़ी बारीकी से विवेचित कर रहे हैं स वे अन्य समाज के आक्रमण से, शोषण से उन पर हुए परिणामों का यथार्थ प्रस्तुत कर आदिवासी समुदाय में चेतना जागृत करने का काम कर रहे हैं स साहित्यिक दुनियाँ के लिए यह नया खजाना है स इसे संवेदनशीलता के साथ-साथ बड़ी गंभीरता से देखने-सुनने की आवश्यकता है स क्योंकि अब इनके शब्द नगाड़े की तरह बजते हैं स

आदिवासी राजनीतिक चेतना की ऐतिहासिक परंपरा और वर्तमान-

"पिछले पाँच हजार साल से आदिवासी लोग अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं स"[17] स्वतंत्रता के पश्चात "आदिवासी क्षेत्रों में विकास परियोजनाएँ आयी स .... जगह-जगह व्यापक स्तर पर खदानें शुरू होती हैंए बड़े-बड़े बाँध बनाएँ जाते हैं स राष्ट्रीय उद्यानों की योजनाएँ बनती हैंए बड़े-बड़े कारखाने लगाएँ जाते हैं, सड़कें बनायीं जाती हैं और इन सब योजनाओं के लिए व्यापक स्तर पर आदिवासियों की जमीनें छिनी जाती हैं, व्यापक स्तर पर कटाई शुरू कर वनों को रातों-रात साफ किया जाता हैं स"[18] आदिवासी चिंतकों का मानना है कि भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात क़ानूनी रूप से सुरक्षित आदिवासी सरकारी विकास नीतियों का शिकार बना स आदिवासियों ने अपनी संस्कृति निर्माण में, जीवन मूल्यों के निर्माण में काफी कुछ गँवाया स लाखों पीढ़ियों ने बलिदान दिया स तब कहीं जाकर मूल्य निर्माण हुए स संघर्ष उनके स्वभाव में ही है स अंग्रेजों की वन नीति और शोषण तंत्र का भारत में प्रथमत: आदिवासियों ने ही विरोध किया 1855 का सिदु-कान्हो 'हूलष क्रांति, बिरसा का 'उलगुलानष (1900) और ऐसे हजारों संघर्ष, विद्रोह आदिवासी जननायकों ने किएँ स परंतु तत्कालीन इतिहासकारों की मर्यादा के कारण मुख्य समाज के इतिहास का अंग न बन पायें स और आदिवासियों का पराक्रमी, शौर्यशाली, बलिदानीए प्रेरणाप्रद इतिहास समय के साथ दफ़न हो गया स स्वतंत्रता के पश्चात भी भारत में आदिवासी इलाकों में सामाजिक कार्यकर्ताओं, सामाजिक संगठनों द्वारा जंगल-जमीनों को बचाने के लिए सक्रीय आंदोलन चल रहे हैं स दुर्भाग्यवश किसी मिडिया हॉउस को यह नहीं दिखाई दे रहा है स राकेशकुमार सिंह का 'पठार पर कोहराष और संजीव का 'पाँव तले की दूबष में आदिवासियों में कहीं भी संघर्ष की करने की हिम्मत ही नहीं दिखाई देती स अर्थात सब कुछ दाँव पर लगा हुआ देखकर भी आदिवासी चुप बैठा है स यद्यपि समुदाय के अनेक कार्यकर्ता निरंतर संघर्षरत है स उक्त उपन्यासों में संघर्षहीनाता आदिवासी स्वभाव के प्रतिकूल है, जबकि विनोदकुमार का 'समर शेष हैष आदिवासियों को गौरान्वित करता है स "डॉ.वीर भारत तलवार ने इसे झारखंड के आदिवासियों पर लिखा गया अब तक

का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास कहा है स"[19] इस उपन्यास की खास विशेषता है कि वर्तमान आदिवासी राजनेताओं ने मुख्यधारा के दलों के साथ समझौता करने से आदिवासी हितों को दुर्लक्षित कर नेता स्वयं बड़े हुएँ है स समुदाय जैसे थे रहाए बल्कि अधिक समस्याओं से घिर गया स आज सभी दलों के आदिवासी नेताओं की स्थिति और आदिवासियों की स्थिति का सर्वेक्षण करेंगे तो बड़े गंभीर निष्कर्ष निकलेंगे स "राजनीतिक चेतना के आभाव में इन वर्गों की राजनीति को बड़ी पार्टियाँ इस्तेमाल कर रही हैं स"[20] इस संदर्भ में आदिवासी चिंतक केदारप्रसाद मीणा का अध्ययन अत्यंत सटीक है, वे लिखते हैंए "राजनीतिक पार्टियाँ अगर कोई जमीनी राजनेता काम करता है तो जनाधारविहीन अफ़सर (उसी वर्ग का) उसके खिलाफ़ खड़ा करती है स.....पार्टियाँ उनको इस्तेमाल करने के लिए राजनीति में लेकर आती हैं, इन लोगों को संघर्षशील आदिवासी के खिलाफ़ हथियार बनाती हैं स"[21] ये जब चुनाव चुनकर विधानमंडल/लोकसभा में आते हैं तो जमीनी स्तर पर क्या हो रहा है, इससे इन्हें कोई मतलब नहीं होता स अपनी पार्टी के द्वारा मुँह बंद नेता आदिवासी प्रश्नों को कैसे उठा सकते हैं? ऐसे नेता अकूत संपत्ति कमाना और उसे बचाएँ रखना ही राजनीति मानते हैं स इसलिए आज भारतीय राजनीतिक पटल पर आदिवासी समुदाय की अनुपस्थिति (कुछ अपवाद छोड़कर) है स राजनीतिक दृष्टि से यह नेतृत्वहीन समुदाय है स सभी को विदित है कि जब कोई देश, समुदाय नेतृत्वहीन हो जाता है तो उसे दुनियाँ की कोई ताकत नहीं बचा सकती स इसलिए समुदाय के नेतृत्व के लिए पढ़े-लिखे, निस्वार्थी, योग्य और समर्पित युवाओं को आगे आने की आवश्यकता है स

निष्कर्ष

भारतीय आदिवासियों ने स्वाभिमानए स्व-शासन, सम्मान और देश की प्राकृतिक सुरक्षा के लिए अनेकों संघर्ष किएँ हैं स कई हजार वर्ष यहाँ रहकर अपनी संस्कृति, मूल्यए भाषा और प्राकृतिक जीवन दर्शन निर्माण करनेवाले इस समुदाय की आज स्थिति दयनीय है स समय साथ हालात बदले स सत्ताकांक्षी लोगों द्वारा शोषण और नीतियों ने आज उन्हें इस नाजुक स्थिति में ला दिया है स समय के साथ समझौता करनेवाला समुदाय होता तो ये नष्ट भी हो जाता, किंतु प्रकृति के निरंतर संघर्षशील स्वभाव को आत्मसात कर खुद को बनाए रखने का जन्मजात गुण उनके रक्त में ही हैं स अत: अपने स्वभाव के मुताबिक आदिवासी सामाजिक कार्यकर्त्ताए चिंतक और रचनाकार आज सब कुछ गँवा कर भी अपने पुरखों की लड़ाई लढ़ रहे हैं स देश की आजाद के पश्चात "आदिवासी इलाकों में चले ऐसे विभिन्न विकास कार्यों से 1951-1990 के बीच कोई दो करोड़ तेरह लाख लोग विस्थापित हो चुके हैंए जिनमें नब्बे फीसदी लोग आदिवासी हैं स"[22] विस्थापन से लोग जमीन से टूट जाते हैं स इसलिए चामुलाल राठवा अपनी कविता 'बाँध और मौत' में बड़े चिंतित होकर लिखते हैंए"जहाँ हैं आदिवासी वही हैं बाँध / और वहीं है आदिवासी की मौत / जहाँ आदिवासी हैं वहीं हैं खदानें / वहीं आदिवासी भट्ठी का घान /

जहाँ आदिवासी है वहीं हैं नए-नए प्रकल्प / वहीं है उनको दफ़नाने का संकल्प स”[23] मानव निर्मित विस्थापन से भारतीय आदिवासियों का बहुत बड़ा नुकसान हुआ है स मौजूदा विकास परिकल्पना ने आदिवासियों के सामने एक अघोषित युद्ध छेड़ दिया है स आदिवासी साहित्य “भारतीय प्रजातंत्र और विकास के मौजूदा चरित्र को जिस तरह प्रश्नांकित करता हैए वह भारतीय साहित्य में नया है स वस्तु और अभिव्यक्ति दोनों दृष्टियों से आदिवासी साहित्य भारतीय साहित्य का न केवल व्याप बढ़ाता हैए बल्कि उसे समृद्ध भी करता है स”[24] अत: हम कह सकते हैं कि आदिवासी साहित्य साहित्यिक रोमांच के लिए लिखा हुआ साहित्य नहीं है स यह एक और शोषण के खिलाफ़ प्रतिरोध भी करता है, वहीं दूसरी और अपनी खोई हुई जमीन भी तलाशता है स प्रकृति के रचे-बचे नियमों के अनुरूप विकसित अपनी संस्कृति को बचाने के लिए बड़े जद्दोजहद से आवाज भी उठाता है स आदिवासी साहित्य भाषा और संस्कृति में छिपे महान जीवन दर्शन को बचाने की कोशिश है स सम्मानए स्वाभिमान और स्व-शासन इनके केंद्र में रहा है स भूमंडलीकरण से आदिवासी समस्याओं में अत्याधिक वृद्धि देखने को मिलती है स यह साहित्य इन तमाम समस्याओं से झूझने की चेतना बनकर उभरा है स आज बौद्धिक जगत में यह नया विमर्श बनकर सभी को अपनी ओर आकर्षित करने में सफल भी हुआ है स आवश्यकता यह है कि भारतीय साहित्यिक पटल पर इसे बड़े धैर्य और संवेदनशीलता के साथ सुना जाएँ स प्रचलित काव्यशास्त्रीय साहित्यिक मानदंडों की अपेक्षा उसमें निहित भाव और आशय को ग्रहण किया जाएँ और आदिवासी साहित्य की उपस्थिति का स्वागत करें स

संदर्भ ;

1. डॉ.खन्नाप्रसाद अमीन, आदिवासी की मौत (काव्य संग्रह)- अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019, पृ. 54
2. झारखंडी भाषा साहित्य संस्कृति व जेएनयू का भारतीय भाषा केंद्र द्वारा संयुक्त तत्वावधान में ‘आदिवासी दर्शन और समकालीन आदिवासी साहित्य सृजन’ विषय पर 14 एवं 15 जून 2014 को आयोजित राष्ट्रीय सेमिनार में ‘आदिवासी साहित्य का राँची घोषणापात्र’ जारी किया गया स
3. प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी, आदिवासी सवाल और साहित्यए अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019, परिशिष्ट-2ए ‘आदिवासी साहित्य पर सवाल-जवाब’ विषय पर डॉ.खन्ना प्रसाद अमीन द्वारा लिए प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी के साक्षात्कार का अंश, पृ.211
4. श्री नवलजी, नालंदा विशाल शब्दसागरए आदिश बुक डिपोए नई दिल्ली-1100005, संस्करण-2010, पृ. 126
5. ॲड.राजेश चौधरीए जैम ब्वदेजपजनजपवद वि प्दकपं ;) डवकपपिमक नच जव 25 श्रंदनंतल 2010द्ध, चौधरी लॉ पब्लिशर्स, पुणे-4411030, आवृति-2011, पृ. 218, तथा भारतीय संविधान की पाँचवीं और छठी अनुसूची स

6. श्री नवलजी, 'वैचारिकी' का अर्थ है 'वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें जीवन संबंधी मूल सिद्धांतों का वर्णन होता है 'नालंदा विशाल शब्दसागर' आदिश बुक डिपो' नई दिल्ली-1100005, संस्करण-2010, पृ. 1304
7. प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी, आदिवासी सवाल और साहित्य' अनुज्ञा बुक्स' शाहदरा' दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019, परिशिष्ट-2' 'आदिवासी साहित्य पर सवाल-जवाब' विषय पर डॉ.खन्ना प्रसाद अमीन द्वारा लिए प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी के साक्षात्कार का अंश, पृ.215
8. श्री नवलजी, 'चेतना' का अर्थ है, 'बुद्धि' मनोवृत्ति, ज्ञानात्मक मनोवृत्ति' स्मृति' सुध' होश' सावधान' विचार' समझ' इ. नालंदा विशाल शब्दसागर' आदिश बुक डिपो' नई दिल्ली-1100005, संस्करण- 2010, पृ.388
9. डॉ.केदार प्रसाद मीणा' आदिवासी प्रतिरोध' अनुज्ञा बुक्स' शाहदरा' दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2016, पृ. 152
10. अश्विनीकुमार पंकज, पुरखा अधिकार और भारत में जंगल कानून' प्यारा केरकट्टा फाउण्डेशन, राँची-834009, पहला संस्करण- जनवरी, 2024, पृ. 20
11. डॉ.खन्नाप्रसाद अमीन, आदिवासी की मौत (काव्य संग्रह)' अनुज्ञा बुक्स' शाहदरा' दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019, पृ. 67
12. 'निर्मला पुतुल' नगाड़े की तरह बजते शब्द' वाणी प्रकाशन, दरियागंज' नई दिल्ली-11002, प्रकाशन-2012, पृ. 85
13. डॉ.केदार प्रसाद मीणा' आदिवासी प्रतिरोध' अनुज्ञा बुक्स' शाहदरा' दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2016, पृ. 121
14. निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द' भारतीय ज्ञानपीठ, तृतीय संस्करण, पृष्ठ सं. 15
15. प्रकृति के ताल-मेल के साथ विकसित जीवन शैली, जिसमें किसी का नुकसान नहीं होना चाहिए' सह-अस्तित्व' समुदाय और सहयोग सिद्धांतों पर जीवन मूल्य एवं सांस्कृतिक चेतना विकसित हुई हो'
16. प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी, आदिवासी सवाल और साहित्य' अनुज्ञा बुक्स' शाहदरा' दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019, परिशिष्ट-2' 'आदिवासी साहित्य पर सवाल-जवाब' विषय पर डॉ.खन्ना प्रसाद अमीन द्वारा लिए प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी के साक्षात्कार का अंश, पृ.211
17. डॉ.केदार प्रसाद मीणा' आदिवासी प्रतिरोध' अनुज्ञा बुक्स' शाहदरा' दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2016, पृ. 68

18. डॉ.केदार प्रसाद मीणाए आदिवासी प्रतिरोधए अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2016, पृ. 101
19. वही, पृ. 82
20. डॉ.केदार प्रसाद मीणाए आदिवासी प्रतिरोधए अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2016, पृ. 149
21. वहीए पृ. 148
22. वहीए पृ. 10
23. चामुलाल राठवाए माझी सनद कुठे आहे? भाषा पब्लिकेशन, वड़ोदरा-390007, प्रकाशन- 6 मार्च 2004, (कविता - धरण आणि मरण) पृ. 21
24. प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी, आदिवासी सवाल और साहित्यए अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019, परिशिष्ट-2ए 'आदिवासी सवाल और कविताएँ' शीर्षक का लेख, पृ. 196

आधार ग्रंथ ;ठेंपब ठववाद्ध-

1. आदिवासी विद्रोह: विद्रोही परंपरा और साहित्यिक अभिव्यक्ति की समस्याएँ-डॉ.केदार प्रसाद मीणाए अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण-2018
2. आदिवासी प्रतिरोध- डॉ.केदार प्रसाद मीणाए अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2016
3. आदिवासीए समाजए साहित्य और राजनीति- डॉ.केदार प्रसाद मीणाए अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण-2018
4. आदिवासी सवाल और साहित्य- प्रो.डॉ.दयाशंकर त्रिपाठी, अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019
5. पुरखा अधिकार और भारत में जंगल कानून- अश्विनीकुमार पंकज, प्यारा केरकट्टा फाउन्डेशन, राँची, झारखण्ड-834009, संस्करण (प्रथम)-2024
6. आदिवासी साहित्य: दिशा आणि दर्शन (मराठी)-प्रो.डॉ.विनायक तुमराम, स्वरुप प्रकाशनए औरंगाबाद-431003, संस्करण (प्रथम)-2012
7. आदिवासी की मौत (काव्य संग्रह)-डॉ.खन्नाप्रसाद अमीन, अनुज्ञा बुक्सए शाहदराए दिल्ली-110032, संस्करण (प्रथम)-2019